इस्लाम क्या है?

इस्लाम क्या है?

UWIN For FREE copy of this book write to:
World Islamic Network™
(Registered Public Trust No. E. 14741 Bom.)
67/69, H. ABBAS (A.S.) ST., DONGRI, MUMBAI- 400009. (INDIA)
☎: (91-22) 23433540/23434304 •Fax:(91-22) 2374 5144
Email: win@bom4.vsnl.net.in • winislam@hotmail.com
For Real Audio please visit our website: www.winislam.com

वही है जिसने उम्मी लोगों के बीच उन्हीं में से एक रसूल उठाया, जो उनको उसकी आयतें सुनाता और उन्हें निखारता है, और उन्हें किताब और तत्वदर्शिता की शिक्षा देता है, और वे पहले तो स्पष्ट गुमराही में थे।

(अल कुरआन ६२:२)

प्रथम संस्करण: २००३

मुफ्त वितरण अल्लाह की आनंद प्राप्ति के लिए।

For Delhi Please Contact :

Mahak Foundation, Vasant Kunj, New Delhi

And

Book Circle

263A, Hauz Rani Market,

Opp.MAX Hospital, Malviya Nagar,

New Delhi – 110017

Tel : 011 65833024, **Cell : 91 9212143746**

प्रारंभ

इस्लाम, 'स-ल-म' मे वना है। और इसका अर्थ है 'अपने अंदर के पाप से आज़ाद हो जाना।' दूसरे मिलते जुलते अर्थ हैं: 'शांति', 'ख़ुद को सौंपना', 'आत्मसमर्पण' 'सेहत' वग़ैरा।

इसलिए मुसलमान वह है जो अपने प्रभु की इच्छा पर ख़ुद को अर्पण कर देता है, जिसने इंसान को सबसे श्रेष्ठ जीव बनाया और उसको एक शक्ति प्रदान की जिसे 'बुद्धि' कहते हैं।

हमने अपनी पिछली पुस्तक 'शांति की ओर' में बुद्धि और मन की शक्ति की विस्तार से चर्चा की थी। और यह भी कि हम किस तरह उन दोनों से अपने पैदा करने वाले प्रभु को पहचान सकते हैं।

हमने यह भी चर्चा की थी कि अल्लाह ने हर समय और हर जमीन पर एक के बाद एक अपने पैग़म्बरों को भेज कर मानव जाति को सद्मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी। हमने उन पैग़म्बरों के संदेशों पर ध्यान दिया तो यह मालूम हुआ कि सभी ने एक ही बात दोहराई है और वह है आख़िरी पैग़म्बर के आने की सूचना।

हमने पुस्तक 'शांति की ओर' में यह बात साबित की थी कि हज़रत मूसा (अ.स.) ने अपनी शिक्षा को यहूदियत का नाम नहीं दिया और न ही हज़रत ईसा (अ.स.) अपने संदेश के लिए ईसाई धर्म शब्द चुना और इसी तरह न ही बुद्धा और दुसरों ने अपने मिशन को बौद्धधर्म आदि कहा।

तो यह सोचना गलत होगा कि सिर्फ १४०० साल पहले अरब

के रेगिस्तान में इस्लाम अचानक अस्तित्व में आ गया। लेकिन यह हक़ीक़त है कि अल्लाह की इच्छा पर आत्मसमर्पण और नेक जीवन यापन का संदेश सभी पैग़म्बरों ने दिया। लेकिन पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (स.अ.) ने उसके लिए 'इस्लाम' की संज्ञा दी, जो मानव को सीधे पथ पर चलने के लिए प्रेरित करती है और यही सीधा रास्ता हो गया।

हमने इससे पहले की किताब में यह बातें समझाई हैं। यहाँ पर हम इस्लाम के सक्रिय सिद्धांत और बहु-आयामों वाले पहलुओं पर प्रकाश डालेंगे।

अतः बिना कारण इस्लाम को प्राकृतिक धर्म नहीं कहा जाता है, क्योंकि इस्लाम अपने आरंभ से ही विकट परिस्थितियों एवं संकट के उतार चढ़ाव से गुज़रा है और कामयाब रहा, क्योंकि यह प्राकृतिक धर्म इंसान के स्वभाव से मेल खाता है और उसके क़ानून इंसान की ज़रूरत के हिसाब से बने थे और सदियाँ गुज़रने पर भी पुराना और बेकार नही हो सकता। क्योंकि यह निःस्वार्थ रुप से मानवहित में सदा-सदा के लिए बना था न कि आज के राजनीतिक परीवेष में राजनीतिज्ञों द्वारा अपने हित को ध्यान में रख कर बनाये गए कानून की तरह था जो एक के बाद दूसरा अपने हितानुसार बदल दे।

इस्लाम के सिद्धांत

इस्लाम, एकेश्वरवाद पर आधारित धर्म है इसलिए इस्लाम का पहला सिद्धांत अनेकेश्वरवाद के स्पष्ट इन्कार एवं एकेश्वरवाद में अपनी पूर्ण आस्था प्रदर्शित करना है। एकेश्वरवाद में अपनी पूर्ण आस्था प्रकट करने के लिए कहा जाता है: 'ला इलाहा इल्लल्लाह'

उपरोक्त अलौकिक वाक्य जो, सर्वप्रथम, अनेकेश्वरवाद के इंकार एवं एकेश्वरवाद पर दृढ़ संकलप रहने का आदेश है। जिसे मानव अपनी बुद्धि एवं आत्मशक्ति से पालन करता है। इस्लाम ने अपने सिद्धांतों को मानने के लिए मानव-जाति को कभी बाध्य नहीं किया बल्कि, उसे अपनी बुद्धि एवं आत्म मंथन से, सोच-समझ कर मानने को कहा। इसलिए सर्वशक्तिमान ईश्वर (अल्लाह) ने कहा: ला इकराहा फिद दीन! ''दीन (धर्म) में कोई जबरदस्ती (डर या भय) नहीं है।''

बल्कि अपने एक ईश्वर (अल्लाह) पर पूर्ण आस्था के साथ इस्लाम की अभिव्यक्ति हो सकती है। अपने ईश्वर (अल्लाह) की शक्ति (कुदरत) पर पूर्ण आस्था रख कर प्रत्येक कर्म को करना जो पालनहार (अल्लाह) ने बताया है।

इसका मतलब यह हुआ कि मानव अपने कर्म का अपने अल्लाह के प्रति ज़िम्मेदार है, और वह इस दुनिया का जीवन उसकी मरज़ी से बिताए। जो शाश्वत जीवन-यापन हो और सद्मार्ग पर अग्रसरित हो। पूरी दुनिया में हर चीज़ ईश्वर की क़ुदरत की शक्ति के आगे छोटी है। जिसने शुन्य से ब्राह्माणड की रचना की और अपनी सभी रचनाओं में उसने मानव की रचना को सर्वश्रेष्ठ बताया।

इसका मतलब यह भी है कि इंसान और उसकी बुद्धि, उन तमाम चीज़ों से ऊँची है जिसे अल्लाह ने बनाया। कोई जीव इंसान के बराबर नहीं है, सभी इंसान से छोटी हैं। यहाँ तक कि प्रकृति की दूसरी शक्तिशाली चीज़ें भी, जिन्हें कम बुद्धिवाले पूजते हैं।

अंत में यह बात साफ हो जाती है कि इस शहादत (गवाही)-(ला इलाहा इल्लल्लाह) की गहरी सच्चाई को समझ लेने के बाद, ईश्वर (अल्लाह) के आदेशानुसार अपनी भौतिक इच्छाओं को इंसान काबू में कर सकता है। अगर इंसान अपनी इच्छाओं के वश में हो जाता है और बुध्दि का प्रयोग नही करता, तो उसकी वह इच्छा उसको नप्ट कर देती है।

ईश्वरादेश मानव-कल्याण एवं सामाजिक भाई-चारे, सद्भाव, समाजिक न्याय आदि का निमंत्रण देता है। फिर भी इंसान पथ भ्रष्ट हो जाता है। ईश्वर (अल्लाह) को धोखा देता है जब कि हकीकत यह है कि इंसान स्वंय को धोखा देता है क्योंकि ईश्वर (अल्लाह) की लीला अपरंपार है, ईश्वर (अल्लाह) एक है, उस जैसा कोई नहीं, हमेशा से है और रहेगा, सब जाननेवाला है और वह किसी की तरह नहीं है न वह कोई रुप रखता है। वह अपनी किसी भी पैदा की हुई चीज जैसा नहीं है। उसकी शक्ति से कोई चीज़ ख़ाली नहीं, और वह सब कुछ जानता है, रहम और इन्साफ करने वाला है। वह सिर्फ अल्लाह है जो पैदा करता है, खिलाता पिलाता है, ज़िंदगी देता है, मौत देता है, मुरदों को ज़िंदगी देता है और एक दिन उसी की तरफ सब जीव पलट कर जानेवाले हैं।

उसका कोई 'साझेदार' नहीं है, वही इबादत के लायक़ है, उसी को आत्मसमर्पण किया जा सकता है और उसी की आज्ञा मानी जा सकती है।

एक ईश्वर (अल्लाह) होने की गवाही देने से काम नहीं चलता बल्कि उसके द्वारा भेजे गए, पैगम्बर, रसूल (जो अल्लाह एवं बंदों के बीच का माध्यम) पर भी अपनी पूर्ण निष्ठा प्रदर्शित करनी होती

है। हर जमाने में एक नवी या रसूल या पैगम्बर रहा है। और उस जमाने के इंसान के लिए उनपर अपनी निष्ठा का प्रदर्शन अनिवार्य (वाजिब) था। इसी तरह आज का जमाना हमारे नवी हजरत मुहम्मद (स.अ.) का है क्योंकि उनके बाद कोई नवी, रसूल या पैगम्बर नही। इसलिए कलमाए शहादत के साथ कलमाए नबूवत अनिवार्य है। यानी, ला इलाहा इल्लल्लाह मुहम्मदर रसूलुल्लाह। पहला कलमा जहाँ एक सर्वशक्ति ईश्वर (अल्लाह) का ऐलान है। तो दूसरा उस महामानव के ईश्वर (अल्लाह) का दूत होने का ऐलान है। चूंकि अल्लाह पूर्ण है इसलिए वह बेहतरीन रसूल भेजेगा जो अपनी मिसाल हो, क्योंकि वह इंसान के लिए आदर्श होगा जो लोगों को सद्मार्ग पर चलने एवं एकेश्वरवाद का संदेश देने वाला होगा। पैगम्बर, रसूल या नबी जो अल्लाह के संदेश को लोगों तक पहुँचाता है सर्वप्रथम वह उसका पालन करनेवाला होता है जो लोगों को सही रास्ते पर ले जाए और उनको इस दुनिया के ऊंच नीच की जानकारी दे।

इंसान एक सामाजिक प्राणी है और समाज की पारिवारिक, आर्थिक, राजनीतिक और दूसरी जरुरतें हैं। इसलिए पैग़म्बर को एक बेहतरीन और पूर्ण उदाहरण होना चाहिए। अपनी ज़िंदगी में इन तमाम चीज़ों को लागू करना चाहिए। और इन आवश्कयकताओं को पूरा किया हज़रत मुहम्मद (स.अ.) ने, जिन्होंने अपने जीवन को लोगों के लिए उदाहरण बनाया। बुद्धि इस बात की ख़ुद गवाही देती है कि हज़रत मुहम्मद आख़िरी पैग़म्बर हैं। क़ुरआने करीम के २१ वें सूरह की १०७ वीं आयत कहती है:

और (हे मुहम्मद !) हमने तुम्हें सारे संसार के लिए कृपालु ही बना कर

भेजा है। (२१:१०७)

एक मुसलमान का यह भी अक़ीदा (विश्वास) है कि हज़रत मुहम्मद (स.अ.) से पहले भी नबी और रसूल आए। उन पर 'वह्य' (ईश्वर का पैगाम) उसी तरह प्रकट होती थी जिस तरह के हज़रत मुहम्मद (स.अ.) पर। और ज़िब्रईल ही अल्लाह के पैग़ाम को पैग़म्बरों तक पहुँचाते थे। अल्लाह तआला ने हज़रत मुहम्मद (स.अ.) पर क़ुरआन भेजा जिस तरह पिछ्ले नबीयों पर दूसरी किताबें भेजी थीं। वे पैग़म्बर हज़रत मूसा (अ.स.) हज़रत ईसा (अ.स.) और हज़रत दाऊद (अ.स.) आदि थे।

इस्लाम कहता है ख़ुदा न्याय करने वाला है। वह अपने सर्जन से उनकी शक्ति से ज़्यादा बोझ नहीं उठवाता। उसने उन के लिए उतना ही कानून रखा है जितना की वे सह सकें। उस परवरदिगार और पालनहार ने उनको आज़ादी दी और रास्ता चुनने की पूरी छूट दी।

अल्लाह किसी पर उसकी शक्ति से बढ़कर ज़िम्मेदारी का बोझ नहीं डालता। (२:२८६)

''और तेरा रब किसी पर जुल्म न करेगा।'' (१८:४९)

मुसलमान के लिए यह भी ज़रूरी है कि वह कयामत पर यक़ीन करे। जब अल्लाह तआला तमाम इंसानों को फिर से ज़िन्दा करेगा हर वह इंसान जो पैदा हुआ था उसको फिर से जीवित किया जाएगा और उसे उसके किए का परिणाम दिया जाएगा। जिस्म या बदन का मर जाना ख़त्म हो जाना नहीं है बल्कि मौत के बाद वाली ज़िंदगी जिसे आख़िरत कहते हैं वहाँ सब को जाना है। जहाँ हमारे कर्मों का हिसाब होगा।

संक्षिप्त में यह कि, उसूले दीन यानि दीन की जड़े यह हैं:-

अल्लाह का एक होना, उसका न्यायिक होना, सर्वशक्तिमान और अनन्त होना।

पैगम्बरों पर अक़ीदा (विश्वास), रसूल पर ईमान उनकी किताबों पर यक़ीन, फरिश्तों पर ईमान और हज़रत मुहम्मद के आख़री पैग़म्बर होने पर यक़ीन।

आख़िरत, इन्साफ, जन्नत और जहन्नम पर ईमान भी उसूले दीन में हैं।

इस्लाम - सब के लिए

दूसरे धर्मों के मुकाबले इस्लाम का सिद्धांत विश्व भर के लिए है। वह ऊँच, नीच, ज़ात-पात की शिक्षा नहीं देता, बल्कि उसकी दृष्टि में वही ऊँचा है जो अल्लाह से ज़्यादा डरता है। कुरआने मजीद ४९ वें सूरह की १३ वीं आयत में फ़रमाता है:

अल्लाह के यहाँ तो तुममें सबसे ज़्यादा इज़्ज़त वाला वह है जो तुममें (अल्लाह का) सबसे अधिक डर रखता है। *(४९:१३)*

कुरआने मजीद की अरबी ज़बान की टक्कर में कोई उदाहरण नहीं ला सका और न ला सकेगा। कुरआन जाति, स्थानीय तथा भाषिक पूर्वाग्रह से बहुत दूर है। बल्कि वह एकता की गवाही देता है। उसमें एक शब्द भी न मिलेगा जो अरब या कोई दूसरी क़ौम की प्रशंसा करता हो। इसी से यह साबित होता है कि इस्लाम सब ही के लिए है।

क़ुरआने मजीद कहता है कि कोई आदमी भी कहीं भी किसी

भी जगह पर मार्गदर्शन से दूर नहीं रखा गया। सूरह बक़रह की २१३ वीं आयत में है:

लोग एक ही समुदाय हैं। (२:२१३)

निश्चय ही यह है तुम्हारा गरोह, एक ही गरोह है। (२१:९२)

और हर समुदाय के लिए एक 'रसूल' है। (१०:४७)

और हमने हर गरोह में कोई न कोई 'रसूल' भेजा... (१६:३६)

और कोई गरोह ऐसा नहीं जिसमें कोई सचेत करने वाला न गुज़रा हो। (३५:२४)

और हमने जो भी कोई 'रसूल' भेजा तो उसकी अपनी जाति की भाषा के साथ भेजा, ताकि वह उनसे खुल कर बयान करे। (१४:४)

है न बड़ी बात? आज किसी भी धर्म की किताब इस बात का प्रचार नहीं करती जिसे कुरआने मजीद ने कहा है।

नैतिकता और सामाजिक आदेश

अब हम आपको कुछ बातें कानून, इबादत और नीति के बारे में बताना चाहेंगे, जिससे इस्लाम की महानता साबित होती है। इस्लाम इस बात का ध्यान रखता है कि ज़्यादा तर ज़ोर नीति और ज़मीर (आत्मा) की जागृती पर हो जो इंसान को इज़्ज़त, सब्र और ज़मीर की आवाज़ के रास्ते पर ले चले।

इंसान की नीति को सुधारने के बारे में कुरआन में बहुत आयतें पाई जाती हैं। अल्लाह अपने रसूल के बारे में कहता है:-

और निसंदेह तुम महान स्वभाव वाले हो। (६८:४)

और दूसरे पैग़म्बरों के सिलसिले में यह आयत है:

जो हमारे हुक्म से मार्ग दिखाते थे और हमने उनकी ओर नेक कामों के करने की वह्य (प्रकाशना) की,... (२१:७३)

मुहम्मद उस नीति को पूर्ण करने के लिए आये थे जो प्रारंभ में आदम लेकर आये थे और वह नीति आदम से ईसा तक सभी पैगम्बर लेकर आये थे। हज़रत मुहम्मद उस नीति को पूर्ण करने को अपने आने की वजह बताते हैं। और नीति का पूर्ण होना ईमान का पूर्ण होना बताते हैं। वह कहते हैं: वह श्रद्धा जिसमें उदार नीति हो वह ज़्यादा पूर्ण है। निसंदेह, वह उदार नीति को आत्मा का सबसे पहला लक्ष मानते हैं।

मैं उसी उदार नीति को पूर्ण करने के लिए भेजा गया हूँ।

जो कोई अच्छाई करता है तो वह ख़ुद अच्छाई से बेहतर है और जो कोई बुराई करता है वह बुराई से ज़्यादा बुरा है।

लेकिन नीति उस समय पूर्ण होगी जब वह बुराई को छोड़ दे। इस्लाम सख़्त नाराज़ होता है इन सामाजिक बीमारियों से जैसे झूठ, धोकेबाज़ी, बेईमानी, दुश्मनी, चुगली, ...आदि और फिर वह मोमिन (अल्लाह एवं उसके नबी और उनकी औलाद पर इमान रखने वाला) के दिल में नेकियाँ डालता है जैसे ईमान, सच्चाई, इन्साफ़, सब्र, रहम, दूसरों के अधिकारों का ख़्याल करना, ...आदि.

यह नेक कार्य कुरआने मजीद की आयतों से समझा जा सकता है:

...और न तुम में से कोई किसी की पीठ पीछे निन्दा करे– क्या तुममें से कोई इस बात को पसन्द करेगा कि अपने मरे हुए भाई का मांस खाये? यह तो तुम्हें अप्रिय लगा ना! (४९:१२)

जो लोग यह चाहते हैं कि ईमान लाने वालों में अश्लीलता फैले, उनके लिए दुनिया और आख़िरत में दुखदायिनी यातना है। (२४:१९)

और उस अल्लाह का डर रखो जिसके वास्ते से तुम दूसरे से सहायता चाहते हो, और रिश्तों और नातों (को तोड़ने) से डरो। निस्सन्देह अल्लाह तुम्हारी निगरानी कर रहा है। (४:१)

अल्लाह बदज़बानी को पसन्द नहीं करता सिवाय इसके कि किसी पर जुल्म किया गया हो। (४:१४८)

और उनसे ऐसी रीति से वाद-विवाद करो जो उत्तम हो। (१६:१२५)

एक भली बात कहनी और क्षमा से काम लेना सदक़े से उत्तम है जिसके पीछे दुख देने की बात हो। (२:२६३)

हे ईमान लाने वालों! अपने सदक़े को एहसान जता कर और दुख पहुँचा कर, उस व्यक्ति की तरह बर्बाद न करो। (२:२६४)

हज़रत मुहम्मद (स.अ.) ने फ़रमायाः *पीठ पीछे बुराई करना (ग़ीबत करना) व्यभिचार करने से बुरा है।* जब आपसे इस वाक्य का स्पष्टी-करण पूछा गया तो आपने फ़रमायाः *एक व्यभिचार करने वाले की तौबा अल्लाह क़बूल कर सकता है लेकिन ग़ीबत करने वाला उस वक़्त तक माफ़ नहीं किया जा सकता जब तक उसने जिसकी ग़ीबत की थी वह माफ़ न करे।*

इबादत

अल्लाह, तआला फ़रमाता हैः

निसंदेह मैं अल्लाह हूँ। मेरे सिवा कोई इलाह (ईश्वर) नहीं। अतः तू मेरी इबादत कर और मेरी याद (स्मरण) के लिए नमाज़ क़ायम कर। (२०:१४)

इस्लाम के कानून ईमान की बुनियाद पर हैं। ईमान से जुड़े मुद्दों

पर व्यवहार किस तरह होना चाहिए, और किस तरह इंसान के दिल की गहराई में नीति को उतरना चाहिए और किस तरह उसे इंसान की आत्मा में बस जाना चाहिए, यह सब ईमान ही करता है। ईमान ज़िंदगी को सँवारता है और अपने अल्लाह से रिश्ता मज़बूत करता है।

अल्लाह तआला ने हमें इबादत करने का तरीक़ा बताया। जैसे पाँच वक़्त की नमाज़, रोज़ा, हज्ज, दुआ, अल्लाह से मन्नत, कुरआन पढ़ना आदि, ताकि इंसान अपने पैदा करने वाले का शुक्र अदा करे और उसका वफ़ादार रहे और अपने आप को बनावटी ख़ुदाओं और ख़्वाहिशों से दूर रखे।

हमें चाहिए कि हम अपने आप को तमाम गंदगीयों (नजासात) से पाक रखें जैसे पेशाब, पाखाना, ख़ून, मनी (वीर्य), कुत्ता, सूअर और मुरदार आदि। इन्हीं नजासतों से इबादत करने से पहले भी पाक रहें। जैसा कि नमाज़ पढ़ने के लिए ज़रूरी है कि वुज़ू करे। परंतु कुछ मौक़ों पर ग़ुस्ल (स्नान) करना ज़रूरी और अनिवार्य है, जैसे यौन सम्बंध के बाद, वीर्य निकलने के बाद (पुरूषों के लिए), स्त्रियों को माहवारी के बाद या बच्चा जनने के बाद।

हर वाजिब (अनिवार्य) अमल के पीछे एक मक़सद है। रोज़ाना की नमाज़ यह याद दिलाती है कि अल्लाह और मख़लूक़ (पशु और आदमी) का क्या संबंध है और यह सच्चाई और ईमान का सबूत है।

रमज़ान के रोज़े अपने आप को सुधारने और पिछले आमाल (कार्य) पर नज़र डालने का मौक़ा हैं। यह रोज़े इंसान में अनुशासन

(नज़्म), सब्र, अच्छे काम करने का जोश पैदा करते हैं और सेहत में भी सुधार लाते हैं।

मक्का जाकर हज करना हर मुसलमान पर जिंदगी में एक बार वाजिब है जो वहाँ जाने की हैसियत रखता हो और बालिग़ हो। यह हर साल पृथ्वी पर एक बहुत बड़ा जमाव-सभा है जहाँ अलग अलग मुल्क, अलग अलग नस्ल और रंग के लोग इकट्ठा होते हैं जो अलग-अलग भाषा बोलने के बावजूद एक साथ अपने अल्लाह के दरबार में 'अल्लाहुम्मा लब्बैक' (हे अल्लाह मैं उपस्थित हूँ) कहते हुए रोते और गिड़गिड़ाते हैं। यह हज ऐसा मौक़ा है जहाँ सब एक साथ इबादत करते हैं और मुसलमानों की समस्याओं की भी एक दूसरे से चर्चा करते हैं।

शारीरिक और मानसिक (नफ़सियाती) देखरेख

अल्लाह तआला फ़रमाता है: *हे आदम की सन्तान! इबादत के हर अवसर पर अपनी शोभा को धारण कर लो; और खाओ पियो, परंतु हद से आगे न बढ़ो। निसंदेह अल्लाह मर्यादाहीन लोगों से प्रेम नहीं करता।*

(७:३१)

लोगों! धरती की चीज़ों में से जो हलाल और पाक हैं उन्हें खाओ,...

(२:१६८)

कहो: अल्लाह की उस शोभा को जो उसने अपने बन्दों के लिए निकाली है, और रोज़ी की अच्छी चीज़ों को किसने हराम कर दिया है?...

(७:३२)

इस्लाम ने ऐसे क़ानून बनाए हैं जो बीमारियाँ और गंदगी को इंसान की सेहत और शरीर से दूर रख कर उस की रक्षा करते हैं।

इस्लाम इस बात पर भी ज़ोर देता है कि साफ सफाई शरीर के साथ-साथ रूह (आत्मा) को भी सेहतमंद रखती है।

और उन चीज़ों की मनाई कर के हराम (निषेध) कर दिया जो शरीर के लिए हानिकारक हैं, जैसे नाजाएज़ शारीरिक संबंध, समलैंगिक, सुअर का मांस, शराब पीना, ख़ून पीना वग़ैरा, इस्लाम ज़्यादा खाना खाने को भी मना करता है क्योंकि उससे सेहत पर ख़राब प्रभाव पड़ता है।

इमाम (धर्मगुरु) जाफ़र सादिक़ (अ.स.) इमाम अली (अ.स.) का कथन उद्धृत करते हैं: *अल्लाह ख़ूबसूरत है और ख़ूबसूरती पसंद करता है, और यह भी पसंद करता है कि उसके बंदे ठीक ठाक रहें।*

लेकिन वह यह नहीं चाहता कि लोग घमंड करें और झूठी शान दिखाएं और न ही ऐसी पोशाक पहनें जिससे समाज में ख़राबियाँ पैदा हों।

इस्लाम अपने शरीर को चुस्त रखने के लिए भी ज़ोर देता है।

रसूले इस्लाम (स.अ.) ने फ़रमाया: *अपने लड़कों को तैरना, निशानेबाज़ी (तीर कमान) और घुड़सवारी सिखाओ।*

तुम पर तुम्हारे शरीर का यह अधिकार है कि तुम उसकी देखरेख करो।

एक समझदार आदमी ही अपनी सेहत का मज़ा अपनी ज़िंदगी में उठा सकता है जिस तरह अल्लाह ने हुक्म दिया है।

आदर और सम्मान

मर्द और औरत, दोनों को इस्लाम में स्वतंत्रता और आत्मीय अभिव्यक्ति की आज़ादी है, जो समाज में उनके अधिकारों को स्पष्ट करती है।

अल्लाह तआला कुरआन में फ़रमाता है:

और हमने आदम की औलाद को श्रेष्ठता प्रदान की। और उसे भूमी और समुद्र में सवारी दी, और उसे पाक चीज़ों की रोज़ी दी, और उसे ऐसे बहुतों की अपेक्षा जिन्हें हमने पैदा किया है बड़ाई दी। (१७:७०)

हे लोगों! हमने तुम्हें पैदा किया एक पुरुष और स्त्री से, और तुम्हारी बहुत-सी जातियाँ और वंश बनाये, ताकि तुम एक-दूसरे को पहचान सको। अल्लाह के यहाँ तो तुममें सबसे ज़्यादा इज़्ज़त वाला वह है जो तुममें सबसे अधिक डर रखता है। (४९:१३)

इस्लाम ने इस बात पर ज़ोर दिया है कि समाज में लोग मिल जुल कर रहें और सब बराबरी के साथ ज़िंदगी गुज़ारें। वह एक दूसरे से अपने अधिकारों में बंधे हुए हैं। मोहब्बत, इज़्ज़त और एक दूसरे की मदद में साथ-साथ हैं।

हक़ अदा करने और तक़वा (ईश-भय के काम) में एक दूसरे को सहयोग दो। और गुनाह और ज़्यादती के काम में सहयोग न दो। (५:२)

पड़ोसियों पर ख़ास ध्यान देना चाहिए। उनका अधिकार बहुत महत्व रखता है। अपनों से बड़ों के और रिश्तेदारों के हक़ का भी ख़्याल रखना है। एक अजनबी का भी कुछ न कुछ हक़ होता है।

पैग़म्बर (स.अ.) की हदीस है: *जो कोई अल्लाह और क़यामत पर ईमान रखता है, अपने पड़ोसी पर महेरबानी करे। जो कोई*

अल्लाह और क़यामत पर ईमान रखता है अपने मेहमान का स्वागत करे, जो कोई अल्लाह और क़यामत पर ईमान रखता है वह सच बोले या फिर चुप रहे।

ईमानवाले, मोहब्बत, रहम और जज़बात में एक शरीर और जिस्म की तरह हैं और उनके अंग के किसी भी हिस्से में दर्द होगा तो पूरा शरीर बेचैन हो जाएगा।

परिवार

इस्लाम परिवार को समाज का महत्वपूर्ण हिस्सा मानता है और ज़ोर देता है कि घरेलू संबंध जरूरी हैं।

चूँकि परिवार समाज का बुनियादी हिस्सा है इसलिए इस्लाम इस पर ख़ास ध्यान देता है। पति-पत्नी, माँ-बाप और बच्चों के आपस के रिश्तों और भाई-बहनों के अधिकार एक मज़बूत परिवार बनाते हैं। और समाज में ख़ुशहाली लाते हैं। कुरआन मजीद फ़रमाता है: ***और उसकी निशानियों में से यह है कि उसने तुम्हारे लिए स्वयं तुम ही में से जोड़े पैदा किये ताकि तुम उनके पास आराम और चैन पाओ और तुम्हारे बीच प्रेम और दयालुता रख दी।*** *(३०:२१)*

और उनके साथ भले तरीक़े से रहो-सहो। *(४:१९)*

और उन स्त्रियों के भी समान्य नियम के अनुसार वैसे ही अधिकार हैं जैसे कि स्वयं उन पर हैं। *(२:२२८)*

पैग़म्बरे इस्लाम शादी के महत्व और परिवार की ज़रूरत को इन शब्दों में उजागर करते हैं: *इस्लाम में अल्लाह की नज़रों में शादी से ज़्यादा कोई इमारत प्रिय नही है।*

अगर कोई विवाह करता है तो अपना आधा धर्म बचाता है। और बाकी आधे धर्म को बचाने की जिम्मेदारी को वह पूरा करे।

इस्लाम पति-पत्नी के रिश्ते को मुहब्बत और पारस्परिक सम्मान की बुनियाद पर रखता है। पति की ज़िम्मेदारी है कि वह अपनी पत्नी के प्रसाधन सामग्री, सेहत और रहने की अच्छी जगह का इंतज़ाम करे। लेकिन यह सब अपनी कमाई के हिसाब से करे और फिज़ूलखर्च न करे और वह इस्लामी कानून के ख़िलाफ़ न हों।

योग्यता रखने वाले अपनी योग्यता के अनुसार ख़र्च करें। *(६५:७)*

इसी तरह, माता-पिता और औलाद के बीच संबंध ठोस और इस्लाम की राह के अनुसार होना चाहिए। क्योंकि माता-पिता का अधिकार बच्चों पर होता है। और बच्चों का भी अधिकार माता-पिता पर होता है।

और तुम्हारे रब ने फ़ैसला कर दिया है कि उसके सिवा किसी की इबादत न करो, माता-पिता के साथ अच्छा व्यवहार करो।... *(१७:२३)*

...मेरा और अपने माता-पिता का कृतज्ञ हो। मेरी ही ओर आना है। *(३१:१४)*

पैग़म्बरे इस्लाम की हदीस है: *लड़के का अपने माता-पिता पर मेहरबानी से नज़र करना इबादत है।*

दूसरी तरफ इस्लाम माता-पिता से अपने बच्चों से मोहब्बत करने के लिए कहता है और नेकी से पेश आने पर ज़ोर देता है ताकि उनका अच्छा पालन-पोषण हो सके।

पैग़म्बर फ़रमाते हैं: *बच्चों से मोहब्बत करो और उन पर रहम करो जब उनसे कोई वादा करो तो पूरा करो, क्योंकि वह यह*

समझते हैं कि तुम ही उनकी देखरेख करते हो।

अल्लाह तआला फ़रमाता है: ***हे ईमान लाने वालों! अपने आपको और अपने लोगों को उस आग से बचाओ जिसका ईंधन मनुष्य और पत्थर हैं...*** *(६६:६)*

यदि इस्लाम माता-पिता को यह हुक्म देता है कि अपने बच्चों की परवरिश करें बच्चों का भी यह कर्तव्य है कि बड़े होकर वे अपने माता-पिता की देखरेख करें।

स्त्रियों के अधिकार

आज कुछ समाज ऐसे हैं जिसमे स्त्रियाँ अर्ध-नंग चलती हैं (फैशन के नाम पर), कम कपड़े पहन कर तैरती हैं, बार और कल्बों में मर्दों का दिल लुभाती हैं। नाच, गाना, डिस्को और दूसरी जगहों की शोभा बनती हैं।

वे अपने पुरूष मित्र से नाजाएज़ संबंध पैदा करती हैं और जब गर्भवती हो जाती हैं तो गर्भपात करा लेती हैं। अपने शरीर को दिखाकर छोटी बड़ी कंपनियों के लिए इश्तेहार बनती हैं।

और आखिर में उसे 'आज़ाद औरत' का उपनाम दिया जाता है।

इस्लाम में स्त्री का स्थान बिलकुल अलग है। स्त्री को आदर-सम्मान से देखा जाता है। आज़ादी के नाम पर शरीर-प्रदर्शन की आज्ञा नही है।

और इसी सम्मान को पश्चिमी देश इस्लाम में औरत को क़ैद करने के समान कहते हैं। पर्दा या हिजाब को बुरा समझते हैं और

मर्द-औरत के आपस में गले में बाहें डालने को ही बराबरी समझते हैं।

औरतों की आज़ादी का इस्लाम में कहीं बड़ा स्थान है। इस्लाम में उसे आदर-सम्मान और बराबर के अधिकार प्राप्त हैं।

बराबरी का मतलब यह नहीं कि वह मर्दों की तरह कपड़ा पहने, उनकी तरह छोटे बाल कटा ले या उनके साथ उठे बैठे। यह तो उसका अस्तित्व ही ख़त्म कर देगा। बराबरी का मतलब यह नहीं कि वह मर्द बन जाए।

औरतों की आज़ादी का मतलब यह है कि वह उचित कपड़े पहने, और अपने शरीर को दूसरों की नज़रों से बचाए। एक शरीफ़ औरत अपने जिस्म या शरीर की कभी नुमाइश नहीं करती। अगर कोई औरत फैशन की गुलाम है तो आज़ाद कहां है? वह तो दूसरों के इशारों पर नाचती है।

इसीलिए इस्लाम औरत के आदर और सम्मान पर ज़ोर देता है चाहे वह माँ हो, बीवी हो, बहन हो या लड़की हो। परदा या हिजाब औरत को औरत ही रखता है। लोगों से सुरक्षित रखता है और नाजाएज़ फाएदा उठाने वालों से बचाता है।

कुरआने मजीद में है:

हे नबी! अपनी पत्नियों और अपनी बेटियों और ईमान वालों की स्त्रियों से कह दो कि वे (बाहर निकलें तो) अपने ऊपर अपनी चादरों के पल्लू लटका लिया करें। इसमें इस बात की अधिक सम्भावना है कि वे पहचान ली जायें और सताई न जायें... (३३:५९)

लज्जा और शालीनता इस्लाम का एक हिस्सा है। दुनिया और

उसकी तमाम चीज़ें कीमती हैं। मगर सबसे क़ीमती चीज़ नेक पत्नी है।

इस्लाम में औरत को यह हक़ दिया हैं कि वह संपत्ति खरीदे, अपनी मर्ज़ी से शादी करे और बाद में जब हालात सुधर न सकें तो तलाक़ लेने का भी हक़ है। इसी तरह वह अपने पति से बच्चों को दूध पिलाने की मजदूरी ले सकती है। और उनकी परवरिश करने का वेतन भी ले सकती है। इस्लाम ने यह आज़ादी उस ज़माने में दी जब औरतों को सिर्फ नौकरानी और रखैल समझा जाता था। चाहे वह रोमन, यहूदी, ईसाई, अरब या हिंदु रहे हों। सभी ने औरत को दासी बना रखा था।

जिहाद

जिहाद का अर्थ है इस्लाम, न्याय और नेकी की राह में कोशिश और संघर्ष करना।

लोगों को यह ग़लतफ़हमी है कि जिहाद का मतलब सिर्फ़ ग़ैर मुसलमानों के ख़िलाफ़ हथियार उठाना है। जिहाद का एक हिस्सा लड़ाई ज़रूर है लेकिन जब ईमान और इज़्ज़त ख़तरे में हो।

लेकिन इस्लाम सिर्फ़ लड़ाई करने के लिए जिहाद की आज्ञा नहीं देता।

निकल पड़ो, चाहे हल्के हो या बोझल, और अपने मालों और अपनी जानों के साथ अल्लाह के मार्ग में जिहाद करो! (९:४१)

जहाँ तक हो सके तुम लोग (सेना) शक्ति और तैयार बँधे हुये घोड़े उनके लिए तैयार रखो। (८:६०)

जिहाद अलग-अलग तरह से किया जा सकता है जैसेः भाषण, लेखन, माल और हथियार, जैसा मौका हो वैसा जिहाद करें।

दूसरों को सही राह पर लाने के लिए तक़रीर को साधन बनाना या किताबें तथा लेख लिखकर लोगों को जागृत करना भी जिहाद कहा जा सकता है। स्कूल, अस्पताल, सड़कें, पुल वगैरा बनवाना या नौकरियों का इंतज़ाम करना भी जिहाद है।

इस्लाम इंसानों को शांति और अमन का पैग़ाम देता है।

अल्लाह तआला कुरआन में फरमाता है: *और यदि वे लोग सन्धि और सलामती की ओर झुकें, तो तुम भी इसके लिए झुक जाओ, और अल्लाह पर भरोसा रखो।* (८:६१)

नेकी की तरफ दावत देना और बुराई से रोकना

नेक काम करना और उसकी तरफ बुलाना, और बुराई से रोकना ईमान का बहुत ही महत्वपूर्ण हिस्सा है। यह एक बेहतरीन समाज की तरफ ले जाता है।

इसीलिए मुसलमानों के लिए ज़रूरी है कि वे नेकी फैलाएं और बुराई से लोगों को रोकें। ताकि समाज में अच्छाई बढ़ती जाए और बुराई घटती जाए। यह उसी समय संभव है जब यह काम कोई लक्ष बना कर मिल जुल कर किया जाए और नई तकनीक का सहारा लिया जाए जैसे प्रेस, टेप रिकार्ड, टी-वी और कम्प्यूटर आदि।

अल्लाह कुरआने करीम में फैरमाता है:

और तुममें से एक ऐसा गरोह ज़ाहिर होना चाहिए जो नेकी की ओर बुलाये, और भलाई का हुक्म दे और बुराई से रोके। और यही वे लोग हैं जो सफलता प्राप्त करने वाले हैं। (३:१०४)

आज की इस आधुनिक दुनिया में, मीडिया मनुष्य के जीवन पर गहरा प्रभाव डालता है। इसीलिए ज़रूरी है कि सही आदमी इस काम के लिए भेजे जाएं ताकि वे अपनी सृजनात्मकता से लोगों तक सही इस्लाम पहुँचाएँ और लोगों में इस्लाम के प्रति जागृति पैदा करें। और जितने ग़लत प्रचार हो रहे हैं उन्हें रद्द करें।

राजनीतिक व्यवस्था

इस्लाम ने बहुत बारीकी से समाज की व्यवस्था की और उसके राजनीतिक, आर्थिक, न्यायिक, फौजी तथा रक्षण की व्यवस्था भी की।

राजनीति और हुकूमत के बारे में फ़रमाता है:

अल्लाह तुम्हें हुक्म देता है कि अमानतों को उनके मालिकों को अदा कर दिया करो, और जब लोगों के बीच निर्णय करो; तो न्यायपूर्वक निर्णय करो...(४:५८)

और जिन्होंने अपने रब की सुनी और नमाज़ क़ायम की, और जिनका कार्य आपस की मंत्रणा (सलाह) से होता है,... (४२:३८)

नबी को यह कहते हुए सुना गया है कि:

...जो आदमियों पर शासन करता है वह उसका प्रकारी है। वह उनके प्रति जिम्मेदार है। सभी लोग, निःसंदेह, एक दूसरे के प्रकारी हों और एक दूसरे के प्रति जिम्मेदार हों।

तो इस्लाम ऐसी व्यवस्था समझाता है जिसमें राजनीति के साथ साथ इन्साफ़ भी हो और हुकूमत की ज़िम्मेदारियाँ क्या हैं उन्हें किस तरह क़ौम के फायदे के लिए परस्पर मश्वरों से चलाया जाए।

इस्लाम के अनुसार यदि हुकूमत का आधार न्याय एवं इंसाफ पर हो तो उसकी आज्ञा का पालन आवश्यक है।

अल्लाह तआला फ़रमाता है:

...अल्लाह का आदेश मानो, और रसूल का आदेश मानो और उनका जो तुममें अधिकारी (ईमाम) लोग हैं;...

(४:५९)

लेकिन यहाँ शासक का यह मतलब नहीं जिसने हुकूमत छीनी हो या ज़ुल्म के ज़रिए या धोका देकर गद्दी पर बैठा हो, या अधर्म सिद्धांतों को फैलाया हो। चाहे लोकतंत्रात्मक तौर पर ही क्यों न लाया गया हो। हक़ीक़त तो यह है की इस्लाम में शासक वह है जो पैगम्बर की तरह चुना गया हो, जो इस्लाम और शरीअत के अनुसार ही हुकूमत करे और जनता के लिए फायदेमंद हो।

इस्लाम ने तमाम लोगों पर ज़रूरी कर दिया है कि वे सामाजिक और राजनीतिक सिद्धांतों को दीन के पैग़ाम का हिस्सा समझ कर उसकी रक्षा करें।

इस्लाम इस बात की इजाज़त नहीं देता कि हुकूमत के लिए कुछ हो और अल्लाह के लिए कुछ। उसने उम्मत को ज़िम्मेदार बनाया कि वह शरीअत की पाबंदी करे, सामाजिक बुराईयों को दूर करे और ग़लत बातों के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाए।

अल्लाह के रसूल ने फ़रमाया: *जो कोई बुराई देखे तो उसे ज़ोर ज़बरदस्ती से रोके। अगर ऐसा न कर सके तो ज़बान से रोके और अगर ऐसा भी मुमकिन न हो तो अपने दिल में एहसास करे और यह (आख़री तरकीब है) बेशक सबसे कमज़ोर ईमान है।*

इस्लाम लोगों को ज़ालिम की मदद करने से मना करता है। और ज़ुल्म के ख़िलाफ़ संघर्ष करने का हुक्म देता है ताकि समाज में इन्साफ़ बाकी रहे।

कुरआने मजीद कहता है:

और उन लोगों की ओर न झुकना जिन्होंने जुल्म किया है नहीं तो (जहन्नम की) आग तुम्हें आ लगेगी,... (११:११३)

हुकूमत और जनता का संबंध अच्छी तरह समझाया गया है। राजनीति और हुकूमत की बुनियाद न्याय, इन्साफ़, मश्वरा, आज्ञा, निंदा और नसीहत पर है।

इस्लाम ने ग़ैर-मुसलमानों के प्रति भी साफ-साफ कानून बनाए हैं, उन्हें धर्म की आज़ादी दी है ताकि हुकूमत के विरुद्ध वे बग़ावत न करें।

आर्थिक व्यवस्था

अल्लाह तआला फ़रमाता है: *अतः उन्हें चाहिए कि इस घर के रब की इबादत करें, जिसने उन्हें खाना देकर भूख से बचाया और निश्चिन्तता प्रदान करके उन्हें भय से बचाया।* (१०६:३-४)

अर्थशास्त्र इंसान की ज़िंदगी का ज़रूरी हिस्सा है।

इस्लाम कौम की संपंत्ति से साथ साथ निजी, सार्वजनिक संपंत्ति की इजाज़त देता है। और दूसरी तरफ सूद लेना या देना, एकाधिकार और बेईमानी को मना करता है।

जब कि अल्लाह ने व्यापार को हलाल (जायज़) ठहराया है और ब्याज को हराम। (२:२७५)

... जो लोग सोना और चाँदी एकत्र करके रखते हैं और उन्हें अल्लाह के मार्ग में ख़र्च नहीं करते, उन्हें दुःख देने वाली यातना की मंगल-सूचना दे दो। (९:३४)

...ताकि वह (माल) तुम्हारे मालदारों ही के बीच न चक्कर खाता रहे... (५९:७)

और जिनके मालों में एक जाना-बूझा हक़ है, माँगने वाले का और जो पाने से रह गया हो उसका। (७०:२४-२५)

रोज़ी-रोटी कमाने के मामले में इस्लाम सभी लोगों को समान समझता है। और सिर्फ मेहनत और काम को ही मलकियत का मूल अधार समझता है।

अल्लाह तआला फ़रमाता है: *...तो उसके स्कन्धों पर चलो-फिरो और उसकी दी हुई रोज़ी में से खाओ और उसी की ओर (मृत्यु के पश्चात्) दोबारा जीवित होकर जाना है। (६७:१५)*

सही आर्थिक व्यवस्था हर समाज की रीढ़ की हड्डी हुआ करती है और इस्लाम ने संतुलित व्यवस्था का ढ़ाँचा बताकर समाज के हर व्यक्ति के अधिकारों की ज़मानत ली है।

न्यायिक व्यवस्था

कौम की ज़िम्मेदारियों में से एक ज़िम्मेदारी अदालत और कचहरी की है। इस्लाम यह भी जरूरी समझता है कि अदालत से लोगों को इंसाफ मिलना चाहिए और वह भी जल्द से जल्द। वह यह समझता है कि जब तक किसी का जुर्म साबित न हो वह हुकूमत की दृष्टि में मुजरिम नहीं है। क्योंकि जुर्म साबित होने के लिए सबूत और गवाही ज़रुरी हैं। किसी को सिर्फ़ शंका की बुनियाद पर सज़ा

नहीं दी जा सकती क्योंकि मुमकिन है कि क़ुसूरवार कोई और हो।

कुरआने मजीद में यह आयत है: *और यह कि तुम उनके बीच उसके अनुसार फ़ैसला करो जो अल्लाह ने उतारा है...* (५:४९)

इस्लाम के अनुसार कौम की सुरक्षा के लिए अदालत और कानून अनिवार्य हैं।

तुम्हारे लिए किसास में हे बुद्धिमानों जीवन है! (२:१७९)

बेशक इस्लाम आँख बंद कर के हर चीज़ का बदला लेने को न्याय नहीं समझता। चाहे वह सही हो या न हो। ज़ुल्म पीड़ित लोगों को प्रोत्साहित किया जाता है कि वे मुआवज़ा ले लें लेकिन इसका हरगिज़ यह मतलब नहीं कि मुजरिम को मुक्ति दी जाए कि वह अपनी हरकतों को दोहराए।

यह एक बहुत बड़ी हकीकत है कि इस्लामी कानून की वजह से जुर्म दबा रहता है। जैसा कि हम देखते हैं उन मुल्कों में जहाँ शरीयत का कानून लागू है।

कड़ी सज़ाएँ, जिसे पश्चिम देश ज़ुल्म और बर्बरीयत का नाम देते हैं कभी कभी होती है क्योंकि ज़्यादातर इनसे डर कर लोग जुर्म से दूर भागते हैं।

आप इस्लामी समाज का मुक़ाबला पश्चिमी देशों से कर सकते हैं आपको ख़ुद ही अनुभव हो जाएगा।

पश्चिमी देशों में क़त्ल, चोरी, डाका, बलात्कार और लूट-मार आम है। लेकिन जहाँ शरीअत का कानून लागू है वहाँ बहुत ही कम जुल्म होते हैं क्योंकि इस्लामी क़ानून के डर से लोंग इन बुराईयों से खुद ही दूर रहते हैं।

पश्चिमी देशों में क़ानून मुजरिम की हिफ़ाज़त करता है जिस से माहौल में भय और दहशत रहती है।

संक्षिप्त में यह कि इस्लाम में इन्साफ सब के लिए है। एक मामूली ग़रीब आदमी भी फ़ायदा उठाता है और धनवान को भी शिकायत नहीं रहती।

तो हमारे प्यारे पढ़ने वालों, संक्षिप्त में इस किताब ने आप को इस्लामी उसूल की एक झलक दी। अगर इन उसुलों पर अमल किया जाए तो समाज में उन्नति ही उन्नति होगी। यह इस्लामी कानून इंसान के बनाए हुए नहीं हैं बल्कि उन्हें उसी ने भेजा है जिसने हमें पैदा किया है और हमें उससे बेहतर और कौन समझ सकता है?

यदि हम इस पर ग़ौर करें तो क्या यह हमारे और तमाम इंसानों के लिए लाभकारी न होगा?

हमारी अगली पुस्तक की प्रतिक्षा कीजिए।

सारी प्रशंसा अल्लाह के लिएं है, जो सारे संसार का रब है।